प्राचीन भारत पर ईरानी आक्रमण : प्रकृति एवं प्रभाव

अम्बिका प्रसाद*

ईरान से भारत का संबंध अति प्राचीनकाल से ही रहा है जिसका प्रमाण है कि देव–वाणी संस्कृत के अनेक शब्द प्राचीन फारस की भाषा से साम्य रखते है। प्राचीन ईरानी पुस्तक अवेस्ता और प्राचीन भारतीय ग्रंथ ऋग्वेद से भारत और ईरान के बीच प्राचीन काल से ही संबंधो पर यथेष्ठ प्रकाश पड़ता है। जातकों में भी भारत व ईरान के बीच के पारस्परिक संबंधों का उल्लेख मिलता है।

यूनानी आक्रमण की प्रकृति :

ई० पू० छठी शताब्दी में ईरान के राजनीतिक पटल पर हखमनी राज्य का उदय हुआ जिसकी प्रथम नींव साइरस प्रथम ने 558 ई० पू० में डाली। अपने शासन काल (558–530 ई० पू०) में उसने अपने साम्राज्य का विस्तार पश्चिम और पूर्व दोनों दिशाओं में किया। उसका साम्राज्य भूमध्य सागर व यूनान की सीमाओं और पूर्व में बैक्ट्रिया व गांधार तक विस्तृत हो गया।

उस समय उत्तर–पश्चिमी भारत की राजनीतिक स्थिति अस्थिरता की स्थिति में थी जिसका साइरस प्रथम ने लाभ उठाने की चेष्टा की। विलोचिस्तान की और से भारत पर लगभग 550 ई० पू० के अपने प्रथम आक्रमण–प्रयास में यद्यपि कि वह बुरी तरह पराजित हुआ पर उसने अपना साहस नहीं खोया। तत्पश्चात् उसने काबुल की घाटी के रास्ते से उत्तर–पश्चिमी भारत पर आक्रमण किया। कपिशा नगरी को नष्ट किया और आगे बढ़तें हुए अश्वकों एवं पक्थों को पराजित किया। उसके इस अभियान में संभवतः पंजाब के उत्तर–पश्चिम में रहने वाले क्षुद्रकों ने सहायता की थी। साइरस प्रथम के इस सैनिक अभियान की सफलता अथवा असफलता के संबंध में यूनानी एवं अन्य विद्वानों में मत भिन्नता

***राजीव गाँधी नेशनल रिसर्च फेलोशिप प्राचीन भारतीय एवं एशियाई अध्ययन विभाग म० वि० वि० बोध गया।**

है। निआर्कस एवम् मेगास्थनीज का मानना है कि साइरस प्रथम को अपने भारतीय अभियान में कोई सफलता नहीं मिली थी।[1] किन्तु इस मत की सत्यता में संदेह है। एडवर्ड मेसर महोदय लिखते हैं कि साइरस प्रथम ने हिन्दुकुश और काबुल–घाटी पर विजय प्राप्त की थी।[2]

साइरस प्रथम के उपरान्त उसके पुत्र केम्बीसेस (530–522 ई० पू०) ने सत्ता संभाली पर वह अपने साम्राज्य की ही आंतरिक समस्या में उलझे रहने के कारण भारत–अभियान पर ध्यान न दे सका। उसके उत्तराधिकारी डेरियस प्रथम (522–486 ई० पू०) ने हखमनी–साम्राज्य के विस्तार की योजना पर कार्य किया। उसने सर्वप्रथम पंजाब व गांधार पर विजय प्राप्त की जिसकी पुष्टि डेरियस के नक्शी रूस्तम शिलालेख, परसीपोलिस शिलालेख, बेहिस्तुन शिलालेख आदि से होती है। यूनानी लेखक हेराडोटस पंजाब को डेरियस प्रथम के अधीन होने की पुष्टि करता है और साथ ही यह भी उल्लेख करता है कि भारत–अभियान के पूर्व उसने जानकारी प्राप्त करने के उद्देश्य से एक जहाजी बेड़ा स्काईलैक्स के नेतृत्व में भेजा था।

डेरियस प्रथम एवं उसका उत्तराधिकारी क्षयार्ष (468–465 ई०) अपने अल्पकालिक शासन–काल में अपने पिता द्वारा विजित भारतीय प्रदेशों को अपने अधीन रखने में सफल रहा था जिसकी पुष्टि हेरोडोटस के इस उल्लेख से होती है कि धर्मापली–युद्ध में यूनान के विरूद्ध भारतीय सैनिकों ने क्षयार्ष की ओर से भाग लिया था। क्षयार्ष के उत्तराधिकारी–अयोग्य थे और साथ ही साथ उनकी साम्राज्य विस्तार में कोई विशेष रूचि भी न थी। फलतः भारतीय क्षेत्रों में ईरानी प्रभुत्व समाप्त हो गया। डॉ० राजबली पाण्डेय के अनुसार लगभग 425 ई० पू० में भारत में स्थित यूनानी–साम्राज्य के प्रदेश स्वतंत्र हो गये।[3] परन्तु डॉ० राधाकुमंद मुखर्जी के अनुसार "330 ई० पू० में ईरानी सेना सिकन्दर के विरूद्ध गोगामेला में लड़ी थी और इसमें भारतीय सैनिक भी थे। अतः कम से कम 330 ई० पू० तक भारतीय प्रदेशों पर ईरान का अधिकार था।" डॉ० मुखर्जी के इस मत का डॉ० आर० सी० मजुमदार इन शब्दों में समर्थन करते है– 330 ई० पू० में जो (ईरानी) सेना सिकन्दर के विरूद्ध गोगामेला में लड़ी थी, उसमें भारतीय सैनिक थे और इस आधार पर साधारणतया यह माना जाता है कि हखमनी राज्य भारत में 330 ई० पू० तक रहा। किन्तु इससे यह निश्चित निष्कर्ष नहीं निकलता कि भारतीय सैनिक ईरानी सेना के वेतनभोगी सैनिकों के रूप में सम्मिलित हुए थे अथवा नियमित सैनिकों के रूप में। यह अधिक संभव है कि वे मात्र भाड़े के सैनिक रहे हों क्योंकि बाद में सिकन्दर की लड़ाई के समय हखमनी साम्राज्य के क्षत्रपों के नेतृत्व में भी भारतीय सैनिकों के लड़ने का स्पष्ट उल्लेख मिलता है। अतः स्पष्ट है कि उस

समय भारत में कोई ईरानी क्षत्रप था।[5] ईरानी साम्राज्य का अंतिम शासक–डेरियस तृतीय था जिसे 330 ई० पू० में सिकन्दर ने पराजित किया था और हखमनी साम्राज्य का अंत कर दिया था।

ईरानी आक्रमण का भारत पर प्रभाव :

ईरानी आक्रमण का भारत पर दूरगामी प्रभाव पड़ा। इस प्रभाव का क्षेत्र अत्यंत व्यापक न सही पर महत्वपूर्ण अवश्य था। इस प्रभाव को सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनैतिक व सैनिक वर्गो में विभाजित किया जा सकता है।

सांस्कृतिक प्रभाव :

ईरानी आक्रमण ने भारत को सांस्कृतिक रूप से विशेष रूप से प्रभावित किया। दायें से बायें लिखी जाने वाली आरमेईक लेखन शैली 'खरोष्ठी' ईरान की ही देन मानी जाती है। वास्तु एवं स्थापत्य कला के क्षेत्र में भी ईरानी प्रभाव महत्वपूर्ण था। उपाध्याय महोदय का मानना है कि स्तूप बनाने की कला भी भारतीयों को ईरानियों से प्राप्त हुई।[6] डॉ० स्पूनर आदि कुछ विद्वान तो मौर्यकला पर भी ईरानी प्रभाव स्वीकार करते है। भारतीय मुद्रायें भी ईरानी प्रभाव में आई और पत्थरों पर चमकदार पालिश करने की कला भी भारतीयों ने ईरानियों से सीखी।

आर्थिक प्रभाव :

ईरानी आक्रमण का भारत पर आर्थिक दृष्टि से भी प्रभाव पड़ा। ईरान ने दक्षिण–पूर्व जाने वाले व्यापार मार्गो को विस्तृत कर उसे सुरक्षा प्रदान की जिससे वैदेशिक व्यापार में वृद्धि हुई और भारत की आर्थिक स्थिति और अधिक मजबुत हुई। भारतीय सामग्रियों की खपत पाश्चात्य समाज में इतनी बढ़ गई कि जैसा कि रोम का इतिहासकार प्लीनि कहता है– "रोम का सारा सोना विलास सामग्रियों के बदले में भारत पहुँच रहा था। प्लीनि के इस कथन की पुष्टि इस तथ्य से भी होती है कि भारत में कई स्थानों पर रोम के सोने के सिक्के बहुतायत से मिले हैं।

राजनीतिक प्रभाव :

ईरानी आक्रमणों से उत्तर–पश्चिमी भारत की राजनीतिक दुर्बलता स्पष्ट हुई जिसने राजनीतिक एकता के महत्व को प्रतिपादित किया। फलस्वरूप चन्द्रगुप्त एकछत्र राज्य की स्थापना व विस्तृत साम्राज्य की भावना से प्रेरित हुए। साथ ही भारतीयों ने यह भी सीखा कि साम्राज्य की शक्ति राजधानी में संकेन्द्रित होनी चाहिए और केन्द्र की पकड़ दूर के प्रातों पर सुदृढ़ होनी चाहिए। चन्द्रगुप्त ने अपने साम्राज्य को प्रातों में विभक्त किया और अपने वफादारों को उन प्रांतों का राज्यपाल नियुक्त किया। साथ ही, चन्द्रगुप्त ने ईरानी दरबार की अनेक रीतियाँ यथा दरबार में केश धोने की प्रथा अपनाई जिसका उल्लेख स्ट्रेबो ने किया है जो संभवतः

चन्द्रगुप्त अपने जन्म दिवस पर दरबार में करवाता था।[7]

सामाजिक तथा अन्य प्रभाव :

उत्तर–पश्चिमी भारत में ईरानी शासन के दौरान अनेक यूरानी, तुरानी, यूनानी और विदेशी लोग उस भू–भाग में बसे, भारतीय हो गये। पर कुछ लोग पूर्णतः भारतीय न हो सके और विदेशी आक्रमण के समय वे भारत के लिए संकट–रूप थे।[8] ईरानी आक्रमण का एक महत्पूर्ण प्रभाव यह भी पड़ा कि भारतीय सैनिकों ने ईरान की तरफ से अनेक युद्धों में भाग लिया और अपने अदम्य साहस व युद्ध–कौशल से प्रसिद्धि प्राप्त की। फलतः थर्मोपली युद्ध के बाद युद्धों के लिए भारतीय सैनिकों की मांग बहुत बढ़ गई।[9] ईरानी सम्पर्क का सामाजिक प्रभाव मुख्य रूप से मनोविनोद के साधनों के क्षेत्र में हुआ। शकुल–कन्टुक नामक मनोरंजन क्रीड़ा का विचार संभवतः भारतवासियों ने ईरान से लिया था।

समग्रतः ईरानी आक्रमण का भारत पर महत्वपूर्ण एवं दूरगामी प्रभाव पड़ा। ईरान भी भारतीय प्रभाव से अछूता न रहा। ईरान का "मनीखी मजहब" निसंदेह बौद्ध धर्म से प्रभावित था।

संदर्भ सूची

1. मेगास्थनीज
2. डॉ० राधाकुमुद मुखर्जी : द एज ऑफ इम्पीरियल यूनिटी, पृ० 40
3. राजबली पाण्डेय : प्राचीन भारत, पृ० 141
4. डॉ० राधाकुमुद मुखर्जी : उपरोद्धत, पृ० 43
5. डॉ० आर० सी० मजुमदार : ऐन्शियेंट इंडिया, पृ० 98
6. उपाध्याय, भगवत शरण : वृहतर भारत, पृ० 36
7. वही, पृ० 35–36
8. राजबली पाण्डेय : उपरोद्धत, पृ० 141
9. डॉ० राधाकुमुद मुखर्जी : उपरोद्धत, पृ० 42–43